परिवर्तनशील सिद्धान्त

भिक्षु धर्मालोक महास्थविर

Downloaded from http://dhamma.digital/

परिवर्तनशील सिद्धान्त

लेखक तथा प्रकाशक :

भिक्षु धर्मालोक महास्थविर

श्रीघः विहार, कान्तिपुर

प्रथम बार १०००

बु. सं. २५०३

वि. सं २०१६

पचीस पैसा

Downloaded from http://dhamma.digital/

अनुवादक :

श्रामणेर सुदर्शन

मुद्रक

नेपाल प्रेस

१२२, असन त्यौड टोल

काठमाडौं ।

Downloaded from http://dhamma.digital/

परिवर्तनशील सिद्धान्त

शक्ति और परिस्थिति के प्रभाव से कभी कभी कुछ का कुछ हो जाता है। भगवान बुद्ध की जन्मभूमि नेपाल आज संविधान के अनुसार आर्य संस्कृति का अनुयायी हिन्दू धर्मावलम्बी राजा की तरफ से शासित है। बुद्ध की जन्म भूमि में बौद्धों की जो संख्या दिखाया गया है वह भी चिन्ताजनक होने के साथ साथ विचारणीय है। यों तो राजा जयस्थिति मल्ल काल से ही नेपाल के बौद्धों को इस तरह हिन्दू (ब्राह्मण) धर्म के अनुसार परिवर्तन होने में विवश किया गया था कि जिसके फल स्वरूप बुद्ध की जन्म भूमि नेपाल आज भी हिंसा और जातिभेद मूलक देश हो रहा है। अपने पड़ोसी देश भारत की ओर ध्यान देने पर हम कुछ और ही पाते हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्त होने के बाद नवीन भारत के निमित्त विधान के विषय में लोक सभा में विवाद प्रारम्भ हुआ, धर्म के विषय में विचार किया गया और जिसके फल स्वरूप संसार में चार धर्मों को शक्तिशाली पाया गया —प्रथम हिन्दू धर्म, द्वितीय इस्लाम धर्म, तृतीय इसाई धर्म तथा चतुर्थ बुद्ध-धर्म। बाद में इतिहास के उचित अध्ययन तथा उदार दृष्टिकोण के फलस्वरूप धर्म के

Downloaded from http://dhamma.digital/

विद्वान परिषद ने इतिहास के उच्च स्थान में सम्राट अशोक को और पवित्रता एवं बहुजन-हित तथा सुख के उददेश्य में बुद्ध-धर्म को पाया। धर्म के श्रेणी विभाजन में हिन्दू (ब्राह्मण) धर्म निम्न स्तर में पहुँच गया। वस्तुतः स्वतन्त्र भारत की सरकार ने अपने को धर्म निरपेक्ष सरकार घोषणा की।

धर्म निरपेक्ष सरकार वाले नये भारत ने अशोक तथा बुद्ध के प्रभाव में हिन्दूत्व अथवा ब्राह्मण के ॐ वा ईश्वरीय चिन्हको छोड़कर लोकसभा में अशोक-स्तम्भ स्थापित की।

राष्ट्रीय झण्डे में बुद्ध के धर्म-चक्र की चिन्ह मुद्रा तथा राष्ट्रीय छाप में अशोक स्तम्भ का शीर्ष भाग सहित धर्म-चक्र चिन्ह भारत ने रखा। भारत देश के इस ऐति-हासिक निर्णय या व्यवस्था का विरोध किसी भी धर्म--नीति के विद्वान न कर सके। विधान का निर्माण भी सुविधानुसार लिङ्गभेद, जातिभेद, वर्गभेद आदि को महत्व न दे कर किया गया। यह कार्य नवीन भारत के लिए एक सौभाग्य की बात है।

धर्म और समाज

भावना तथा विश्वास से प्रभावित हुए बगैर मनुष्य

Downloaded from http://dhamma.digital/

रह ही नहीं सकता। अतएव भावना और विश्वास का सार धर्म एक ओर समाज को बनाता है तो दूसरी ओर बिगाड़ता भी है। संसार का संघर्ष अथवा झगड़ा ही साम्प्रदायिक भावना पर आधारित है, जिस भावना का संस्थापन एवं प्रतिपालन करता है धर्म। समाज के लिए धर्म की आवश्यकता है क्यों कि सामाजिक प्राणी मनुष्य में भावना और विश्वास होते हैं। वस्तुतः समाज के स्वरूप के साथ ही साथ धर्म का परिवर्तन भी अवश्यम्भावी है। आज राज्य-शक्ति वा सरकार किसी वर्ग विशेष के लाभ का पक्ष नहीं लेती, इसलिए किसी धर्म का भी पक्ष नहीं लेती। जब किसी वर्ग विशेष का पक्ष लेना सरकार की दृष्टि में निकृष्ट हो जाता है तब सरकार अथवा देशको किसी धर्म विशेष की सरकार अथवा देश कहना भी व्यर्थ है।

हम देखते हैं कि साम्प्रदायिक भावना के प्रभाव से कभी कभी दो समाज तथा जातियों का संघर्ष होता है और यही संघर्ष पारस्परिक संघर्ष बन जाता है। इतिहास बताता है कि इतना ही नहीं बल्कि इस दुर्भावना के फल स्वरूप समाज तथा देश में शनैः शनैः परिवर्तन

Downloaded from http://dhamma.digital/

हो कर आज और कल की हालत में आकाश और पाताल का अन्तर हो जाता है जिसके कारण स्थापित एकता भी भङ्ग हो जाती है।

समाज और जातिभेद

आज का युग एकता का युग है, विश्व बन्धुत्व का युग है। इसके अभाव में संसार प्रलयकालीन खतरे में है। इस कारण जो सिद्धान्त एकता के लिए बाधक है वह सिद्धान्त किसी हालत में आज सार्थक नहीं है।

जातिभेद एकता का शत्रु है। जन्मसिद्ध रूप में अधिकार अथवा मान्यता आज के समाज में नहीं दी जाती। ब्रह्मा के सृष्टि का कारण होना और उनके मुख से ब्राह्मण, भुजा से क्षत्रिय, जंघे से वैश्य तथा तलवे से शूद्र का पैदा होना आज के समाज के लिए लेश मात्र भी सार्थक नहीं। योग्यता के आधार पर अधिकार या मान्यता पाने वाले समाज में छूत और अछूत का प्रश्न ही कहाँ! इस विषय का निराकरण तो धर्मनिरपेक्ष सरकार ही सरलता पूर्वक कर लेगी किन्तु किसी धर्म विशेष का देश यह कार्य कैसे कर सकेगा, विचारणीय है।

एकता का सृजन पारस्परिक समानता तथा स्वत-

Downloaded from http://dhamma.digital/

न्त्रता से होता है। ब्राह्मण की सेवा सब करें और शूद्र बेचारों को सबकी सेवा में व्यस्त हो कर रहना पड़े ऐसा तो "सर्वे भवन्तु सुखिनः" के आधार पर होना सम्भव नहीं। एक विशेष जाति को मात्र शस्त्र रखने और चलाने का अधिकार होने के कारण ही भारत पराधीन हुआ था। और भारत स्वाधीन तब हुआ जब उसे जाति-भेद उन्मूलन के समर्थक राजनैतिक नेता मिल गये। मानवीय एकता के बगैर आजादी जीवित नहीं रह सकती। इसी आजादी के लिए ही माहात्मा गांधी जैसे भारत के राष्ट्रपिता को अपने जीवन का बलिदान करना पड़ा। नवीन भारत के लिए यह कितने दुःख की बात है कि राष्ट्रपिता जैसे व्यक्ति को एक ब्राह्मण के हाथों मौत की घाट उतरना पड़ा। यह कितना बड़ा विवेक विराधी कार्य हुआ!

भगवान बुद्ध का कहना है कि जातिभेद निरथक है। कर्म अनुसार जाति विशेष की संज्ञा देकर वे संसारको सन्देश देते थे। मनुष्य में जातिभेद प्राकृतिक नहीं है (वाशिष्ठ सूत्र), ब्राह्मण का सृष्टि ब्रह्मा के मुख से नहीं हुई है (अस्सलायन सूत्र), ब्राह्मणों को कर्त्तव्याकर्त्तव्य निश्चित वा निर्धारित करने का अधिकार नहीं है (एसु-

Downloaded from http://dhamma.digital/

कारि सूत्र), जातिभेद आर्थिक एवं नैतिक दृष्टि में भी निरर्थक है (मधुर सूत्र) इत्यादि बुद्ध का सन्देश कितना ठोस है आज स्पष्ट होता जा रहा है।

उक्त चार वर्णों के तथ्यांशो में से एक पर हम स्वयं विचार करें, एक नारी के गर्भ से उत्पन्न हो उसाका दुग्ध पानकर जो बड़ा हुआ उसे ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न कहना और इसी प्रकार एक स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हो उसीका दुग्ध पानकर जो बड़ा हुआ उसे ब्रह्मा के तलवे से उत्पन्न हुआ है ऐसी परिकल्पना करना, किस आधार पर और किस तथ्यांश पर ?

जातिवाद के निर्माण के समय पहले जातित्व प्रदान कर कार्य विशेष में लागों को पिछे लगा देने को पद्धति अपनाने के कारण से ही उसकी उपयोगिता इतनी जल्दी समाप्त हो गयी है। मनुष्यों को पहले कार्य विशेष में लगा लेने के पश्चात पेशे के आधार पर उनका जातित्व माना जाता और एक पेशे के लोगों को दूसरे पेशे के लोगों का सम्मान करना सिखलाया गया होता तो शायद यह परिणाम इतनी जल्दी न आया होता। तब कर्म द्वारा ही ब्राह्मण तथा शुद्र बनने का सिद्धान्त जीवित हो जाता। इस दृष्टि से बुद्ध-धर्म और हिन्दू (ब्राह्मण) धर्म के सिद्धान्तों

Downloaded from http://dhamma.digital/

में जमीन और आसमान का अन्तर है। हर्ष की बात है कि इस बर्ण धर्म से पीड़ित पददलित अछुतों ने आज बुद्ध-धर्म अपना रहे हैं।

शरण भाव

शरण भाव अगर एक ओर मनुष्य को आधार देता है तो दूसरी ओर उसे निर्बल और दुर्बल भी बना देता है किन्तु बुद्ध-धर्म में उस प्रकार की शरण व्यवस्था नहीं है कि उसके व्यक्तित्व का मूल्य ही बिक जाय। बुद्ध ईश्वर नहीं है, न तो वह दशावतारों में एक अवतार ही है। अवतारवाद बुद्ध के बाद उत्पन्न हुआ है। अवतारवाद दस से चौबीस भी बन गये तो, क्या आश्चर्य है कि आज के दस अवतार की तरह कल लाख अवतारवाद बने। अतः बुद्ध का अवतारवाद वालों के अपनाने में सत्यता नहीं है। बुद्ध ईश्वर के दूत भी नहीं हैं। बुद्ध तो मनुष्यों के ज्ञान हैं इसलिए वह अपने को राह दिखाने वाले मार्ग प्रदर्शक मात्र कहते थे। बुद्ध अपने परम सेवक शिष्य आयुष्मान आनन्द को कहते थे, "अत्तदीपा विहरथ, अत्तसरणा" अर्थात् अपने लिए स्वयं प्रकाश बनो और अपनी ही शरण जाओ। बुद्ध की शरण का तात्पर्य है—उनके प्रति शिष्ट

Downloaded from http://dhamma.digital/

व्यवहार प्रकट करना एवं कृतज्ञता ज्ञापन करना। जिस प्रकार श्री कृष्णजी शरण आने के लिए लोगों को आह्वान करके उनको मुक्त करने का ठीका लेते हैं उस प्रकार बुद्ध नहीं करते। ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर के आधार पर संसार के बनने और बिगड़ने के सिद्धान्त की कोई देवी या देवता बुद्ध-धर्म में नहीं है और न तो ग्राम देश रक्षक अनेकानेक देवता की कल्पना तथा उनकी संतुष्टी के लिए बलि, होम आदि की व्यवस्था ही बुद्ध-धर्म में है।

बुद्ध का विचारवाद व्यक्ति अपनी बुद्धि और विचार शक्ति पर निर्भर होता है। बुद्ध कहते हैं "ब्रह्मा सृष्टिकर्त्ता है या नही स्वयं विचार करो क्यों कि मनुष्य के पास बुद्धि एवं विचार शक्ति दोनों है।" सृष्टिकर्ता ब्रह्मा हो तो रहें पालन कर्त्ता हो तो रहें, किन्तु हमें तो काम करना अनिवार्य है ही! तब हमें इच्छा नहीं रहती है कि विष्णु के श्री चरण में हम अपने श्रम को व्यर्थ में अर्पित करें और उन्हे अनायाश यश मिले। आश्चर्य की बात तो यह है कि ब्रम्हा की सहायता के लिए विष्णु का होना आवश्यक है, किन्तु यह तो जरा सोचिए कि विष्णु की रक्षा अपहरण करने वाले महेश्वर की आवश्यकता क्यों? क्या रक्षा करने वाले विष्णु और

Downloaded from http://dhamma.digital/

अपहरण करने वाले महेश्वर के बीच युद्ध तो नहीं होगा ? ईश्वरवादी कह सकता है कि यह सब ईश्वर की माया है ? परन्तु मैं कहुँगा कि धन्य है यह सब बनाने और बिगाड़ने वाली माया ! वस्तुतः शब्द जाल के भूलभुलैया में हमें गुमराह न होना चाहिए, बल्कि ज्ञान और सत्यता के संसार में प्रवेश करना चाहिए।

बुद्ध-धर्म में त्रिशरण का तात्पर्य कुछ और ही है । जिसके इस तरह विषय में ऊपर उल्लेख कर दिया है । अब रह गई बुद्ध के धर्म की बात, सो उसे कहते हैं जिसका उपदेश भगवान बुद्ध ने दिया था । उनके धर्म में चार आर्य सत्य, आर्य अष्टांगिक मार्ग तथा प्रतीत्य समुत्पाद महत्वपूर्ण हैं । धर्म की शरण जाने का तात्पर्य है -धर्म का अध्ययन व मनन करना और तब उसे अंगीकार करना। और धर्म का प्रतिपालन करने वालों को संघ कहते हैं । संघ आठ प्रकार के पुद्गलों से बनता है । अतः इसी बात से स्पष्ट है कि बुद्ध के उपदेशों को जीवन में चरितार्थ करनेवाले क्षमता सम्पन्न ८ प्रकार के व्यक्तियों को संघ माना जाता है। वे ८ पुद्गल इस प्रकार है :—

(१) वे जो श्रोतापत्ति मार्ग पर चल रहे हैं।

(२) वे जो श्रोतापत्ति फल प्राप्त हैं।

Downloaded from http://dhamma.digital/

(३) वे जो सकृदागामी मार्ग पर चल रहे ह ।
(४) वे जो सकृदागामी फल प्राप्त है ।
(५) वे जो अनागामी मार्ग पर चल रहे हैं ।
(६) वे जो अनागामी फल प्राप्त हैं ।
(७) वे जो अरहत् मार्ग पर चल रहे हैं ।
(८) वे जो अरहत् फल प्राप्त हैं ।

श्रोतापति फल प्राप्त व्यक्ति उसे कहते हैं जिसव्यक्ति में ममत्व भाव, दृष्टिदोष, शंका तथा उपशंका नहीं होती हैं । बुद्ध के पुनर्जन्म सिद्धान्त में ऐसे व्यक्ति को इस संसार में यदि अधिक घूमते रहना पड़े तो सात जन्म तक ही घूमना पड़ेगा । उसी प्रकार सकृदागामी व्यक्ति में लोभ द्वेष तथा मोह दुर्बल होते हैं, उसके लिए एक जन्म सम्भव है । अनागामी व्यक्ति में लोभ तथा द्वेष नहीं होते और मोह दुर्बल हो जाता है । उसे शुद्धावास ब्रह्मलोक में जन्म लेकर मुक्ति मिल जाती है ।

मुक्ति की व्यवस्था सभी धर्मों में है किन्तु बुद्ध के मुक्ति का सिद्धान्त अपने ही विमल उद्योग पर आधारित है, केवल शरण पर नहीं । उनके विचार में तो मानव समाज का इहलोक एवं परलोक किसी के अपने ही मनस्थिति एवं कर्म से बनते हैं और बिगड़ते है । इस कारण

Downloaded from http://dhamma.digital/

देव और मनुष्यों के हित के उपदेशक के रूप में उनकी वन्दना की जाती है। यह मौलिक विशेषता बुद्ध-धर्म में जबतक रहेगी तबतक बुद्ध-धर्म को दूसरे धर्मों से पृथक कर रखेगा और लाख प्रयत्न के बावजूद भी उसे अन्य धर्मों से नहीं मिला सकता। इतिहास बताता है कि बुद्ध-धर्म की उन्नति तथा अवनति क्यों हुई थी। बुद्ध-धर्म का ह्रास कब होता है यह बौद्ध कहलाने वालों को मालूम होना चाहिए। बुद्ध के किसी स्मारक को देव अथवा देवी मान लेने तथा मनवाने से बुद्ध-धर्म नहीं मिटता। अवतारवाद आकर बुद्ध-धर्म को हिन्दू (ब्राह्मण) धर्म में मिलाने के लिए जितना भी प्रयत्न करे सब व्यर्थ प्रयास सिद्ध होगा। अहिंसक बुद्ध राम का दूसरा रूप नहीं हो सकता, न तो अपनी पत्नी तक को त्याग कर जन-कल्याण में व्यस्त रहने वाले बुद्ध १६ हजार गोपिकाओं के बीच नाचने वाले कृष्ण का अवतार ही हो सकते हैं। लौकिक और लोकोत्तर में अन्तर है, क्यों कि सांसारिक दुःख बनाने वाले और मिटाने वाले में फर्क है।

बुद्ध की शरण हम जाते हैं किन्तु प्रयत्न करने पर दुष्कर से दुष्कर कार्य को भी हम यदि असंभव कार्य की

Downloaded from http://dhamma.digital/

संज्ञा-देने की आदत छोड़ दें तो हम स्वयं बुद्ध होना असम्भव नहीं क्यों कि अविद्या से पृथक हो माया से छुटकारा पाया हुआ, राग, द्वेष तथा मोह से रहीत व्यक्ति जो सर्व प्रथम हो कर संसार को सर्व प्रथम ऐसा ही होने की शिक्षा देता है उसे बुद्ध कहा जाता है।

बुद्ध के कथनानुसार अपने कर्मफल का भागी कोई नहीं अपितु स्वयं ही होता है । हिन्दू-धर्म की तरह सब कुछ बनाने और बिगाड़ने का श्रेय ईश्वर के मत्थे मढ़ने का आदेश बुद्ध-धर्म में नहीं है। दुःख के हेतु का सृजन स्वयं करके उससे मुक्ति पाने के लिए बुद्ध की शरण जाना बुद्ध का उपदेश नहीं है। 'कुरुक्षेत्र में युद्ध करने और कराने अथवा मरने और मारने वाला मैं हूँ' ऐसा कथन बौद्ध दर्शन में नहीं है जैसा कि गीता में है और न तो कुरुक्षेत्र म मरने वाले तथा मारनेवाले दोनों स्वर्ग में जाने के व्यवस्था की आशाप्रद व्याख्या कर अर्जुन को अन्त में नरक की यातना दिलाने की जैसी कथा वा उपदेश बुद्ध-धर्म में है।

बुद्ध के विचार में जन्म लेना, बृद्धा होना, रोग होना और मृत्यु होना दुःख कर है । तत्पश्चात दृष्टि-दोष और कृतिदोष से समाजको शारारिक और मान-

Downloaded from http://dhamma.digital/

सिक दुःख होता है । समाज के सुख दुःख से अदृश्य शक्ति स्वरूप ईश्वर का सम्बन्ध नहीं । अतः ईश्वर की शरण जाना आवश्यक नहीं दिखाई देता ।

लुम्बिनी तथा कपिलवस्तु

मनुष्य ने मानवता का मूल्याङ्कन जितना ही अधिक किया उतना ही अधिक उसे बुद्ध-धर्म की महिमा का बोध होता गया । आज ऐसे महान बुद्ध का जन्म स्थान तथा स्वदेश हमारे नेपाल के अन्तर्गत होना विशेष हर्ष की बात है । संसार के प्रायः सभी देशों के लोग आज बुद्ध के जन्म स्थान तथा स्वदेश के दर्शनार्थ आते हैं किन्तु दुःख की बात है कि लुम्बिनी की महिमा समझने की अपेक्षा कपिलवस्तु की महत्ता हम नही समझ सके हैं । २५, ३० वर्ष पहले की बात है- लुम्बिनी में अशोक स्तम्भ तथा शिलालेख के होते हुए भी महामाया देवी को रुमिनदेई, जगदम्बा तथा भगबती मान कर लोग बुद्ध के जन्मदिवस वैशाख पूर्णिमा के बदले चैत्र पूर्णिमा को ही मेला लगा कर उस दिन हजारों पशु -पक्षियों की बलि चढ़ाते थे । यह स्थिति अब लुम्बिनी में तो नहीं है किन्तु ब्राह्मण पुजारी तो अभी भी वहाँ

Downloaded from http://dhamma.digital/

के मन्दिर में है ही। कपिलवस्तु में तो आज तक हिंसादि कर्म होता है। सिद्धार्थ जनक राजा शुद्धोदन की राजधानी 'कपिलवस्तु' का नाम तौलिहवा के रूप में प्रसिद्ध है और साथ ही यह एक ऐसा स्थान हो गया है जो, देश-विदेश से आने वाले दर्शनार्थी यात्रियों को दिखाने की ऐतिहासिक वस्तुएँ छिपाने की जगह बन गया है। यह कितनी अज्ञानता एवं दुःख की बात है !

आशा है, यह अज्ञानता शीघ्र ही मिट जायगी और हमारे ऐतिहासिक महत्व के स्थान लुम्बिनी, कपिलवस्तु तथा देवदह का पुरातात्विक वस्तुओं के संरक्षण एवं विकास आदि के लिए बने राजकीय नियमों के अनुसार समुचित पुनरुद्धार विकास तथा समादर होगा। हमारे ऐतिहासिक स्थल देवदह का भी विकास होना चाहिए।

धार्मिक सहिष्णुता

धार्मिक सहिष्णुता का नारा बुलन्द करना बहुत आसान है लेकिन उसका पालन करना बहुत कठिन है। संयमित जीवन के दृष्टिकोण में सभी धर्मों में पारस्परिक धार्मिक सहिष्णुता का प्रतिपालन करना सम्भव है किन्तु

Downloaded from http://dhamma.digital/

प्रचार तथा प्रसार के कार्य में जव लाग अपनी अपनी दंफु अपना अपना राग करने लगते हैं तब वह असम्भव होता है।

स्वाधीन भारत में डा० अम्बेड़कर के प्रभाव में लाखों व्यक्तियों ने जब बुद्ध-धर्म ग्रहण किया उस समय इस धार्मिक सहिष्णुता ने कुछ काम किया हो ऐसा नहीं देखता। हिन्दू-धर्म ब बौद्ध-धर्म एक ही हैं अथवा दोनों धर्म आर्य धर्म की दो शाखाएँ हैं-इन सभी सिद्धान्तो ने भी वहाँ कुछ भी उदारता न दिखायी । नब दीक्षित बौद्धों को लोगों ने बहुत बाधाएं पहुँचायी। ऐसे प्रचार और व्यवहार का असंतुलन वाले कार्य हमारे देश में भी हुए थे और होते ही हैं। मनुष्य को धर्म-पालन के अधिकार के साथ साथ प्रचार को भी अधिकार मिलना चाहिए। धर्म प्रचार के ही आरोप में नेपाल के भिक्षुओं को देश-निष्कासन का दण्ड अनेक बार दिया गया था जो अधिक वर्ष पहले की बात नहीं। हम अपने देश में धार्मिक सहिष्णुता की बात कहते हुए तो देखते हैं। किन्तु किसी ब्राह्मण को 'स्वयम्भू' की परिक्रमा करते, नहीं देखते पाते हैं।

Downloaded from http://dhamma.digital/

आज हमारे संविधान में अपना धर्म पालन करने का अधिकार सुरक्षित है किन्तु धर्म परिवर्तन कराने में वाधा है।

अपने धर्म में लाने के लिए तो वाधा नहीं है। स्वतंत्र, प्रजातन्त्र घोषित देश में भी पक्षपात धर्म कभी टिका रह सकेगा ? परिवर्तन धर्म भी किसी के रोकने से रुकेगा ? कभी नहीं। परिवर्तन तो होगा ही।

समाप्त

३ फरवरी १६ ६०

सुबह ७ बजे

Dhamma.Digital

Downloaded from http://dhamma.digital/

भिक्षु धर्मालोक का

ग्रन्थमाला—

१. लोकय् कुचाल कुव्यवहार सुधार
२. अनुत्तर विजय 'गुरुमण्डल'
३. ईश्वर ह्मसीकि
४. बुद्धगुण, धर्मगुण, संघगुण
५. प्रज्ञादर्शन प्रथम भाग
६. " द्वितीय भाग
७. सतिपट्ठान
८. ज्ञानमाला
९. परित्राण
१०. महा चिन यात्रा
११. त्रिरत्न बन्दना
१२. पञ्चशील
१३. भावसुधार
१४. चर्य्याचार बुद्धको ज्ञानमा पाँच ज्ञान मूर्ति बुद्ध नाम–रूप निरोध
१५. चर्य्याचार बुद्धको ज्ञानमा पाँच बुद्ध मूर्ति धयागु न्ह्यसःया लिसःयात लिसः
१६. "बुद्धया पुत्र प्रति उपदेश" यात ज्गु प्रतिवाद
१७. बौद्ध धर्म हे मानव धर्म
१८. पञ्च शील त्रिगुण पूजा
१९. उत्तम विचारनीय नाम रूप विरोध बुद्धको पाँच ज्ञानमूर्ति

मुद्रक– नेपाल प्रेस, असन त्याड, काठमाडौं।

Downloaded from http://dhamma.digital/